ओ३म्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्
राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा

तिथि–10 सितम्बर 2019
सृष्टि संवत्- १, ९६, ०८, ५३, १२०
युगाब्द-५१२०, अंक-११८, वर्ष-१३
भाद्रपद, विक्रमी २०७६ (सितम्बर 2019)
मुख्य संपादक : हनुमत्प्रसाद 'अथर्ववेदाचार्य'
कार्यकारी संपादक : आचार्य सतीश
सम्पर्क सूत्र: 9350945482
Web: www.aryanirmatrisabha.com
E-mail : krinvantovishwaryam@gmail.com

ऋषि दयानन्द

# कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

(राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा का मासिक विचार पत्र)

**स वज्रभृद्दस्युहा भीम उग्रः सहस्रचेताः शतनीथ ऋभ्वा। चम्रीषो न शवसा पाञ्चजन्यो मरुत्वान्नो भवत्विन्द्र ऊती ॥** –ऋ० १। ७। १०। २

व्याख्यान–हे दुष्टनाशक परमात्मन्! आप (वज्रभृत्)? अच्छेद्य, दुष्टों के छेदक सामर्थ्य से सर्वशिष्ट–हितकारक दुष्टविनाशक जो न्याय, उसको धारण कर रहे हो। (प्राणो वा वज्रः) इत्यादि शतपथादि का प्रमाण है। अतएव (दस्युहा) दुष्ट पापी लोगों का हनन करनेवाले हो। (भीमः) आपकी न्याय-आज्ञा को छोड़नेवालों पर भयंकर भय देनेवाले हो। (सहस्रचेताः) सहस्रों विज्ञानादि गुणवाले आप ही हो। (शतनीथः) सैकड़ों असंख्यात (पदार्थों) की प्राप्ति करानेवाले हो। (ऋभ्वा) अत्यन्त विज्ञानादि प्रकाशवाले हो, और सबके प्रकाशक हो, तथा महान् वा महाबलवाले हो। (न चम्रीषः) किसी की (चमू) सेना में वश को प्राप्त नहीं होते हो। (शवसा) स्वबल से आप (पाञ्चजन्यः) पाँच प्राणों के जनक हो। (मरुत्वान्) सब प्रकार के वायुओं के आधार तथा चालक हो। सो आप [(इन्द्रः)] इन्द्र हमारी रक्षा के लिए प्रवृत्त हों, जिससे हमारा कोई काम बिगड़े नहीं ॥

## सम्पादकीय

# प्रथम पूज्य देव कौन?

सद्यः ही समान्न इस भाद्रपद मास के शुक्लपक्ष की चतुर्थी तिथि को सम्पूर्ण देश में ''गणेश चतुर्थी'' के नाम से जाना जाता है, उत्तर में न्यून और दक्षिण में अधिक उसमें भी महाराष्ट्र में सर्वाधिक रूप से इस ''गणेश चतुर्थी को पारिवारिक एवं सार्वजनिक रूप से मनाया जाता है। महाराष्ट्र का अनुकरण करते हुए ही गोवा, कर्नाटक, गुजरात आदि प्रान्तों में भी प्रचुर रूप में यह महोत्सव प्रचारित हुआ है। आन्ध्र, तेलंगाना, तमिलनाडु, केरलादि के साथ-साथ बंगाल, ओडिशादि में भी यत्किंचित प्रचार ''गणेश चतुर्थी'' का देखने को मिलता है। पौराणिक मान्यताओं के अनुसार इसी दिन ''श्री गणेश'' जी का श्री गणेश हुआ था अर्थात् जन्म हुआ था। कथा प्रायः भारत के जनमानस में प्रचलित है, इसलिए उसका उल्लेख आवश्यक नहीं है। पुनरपि यह विचार अवश्य करेंगे कि- वैदिक धर्मानुरागियों के प्रथम पूज्य कौन हैं? क्या ''श्री गणेश जी'' हमारे वेदोक्त प्रथम पूज्य देव हैं? जैसा कि- हिन्दुमतावलम्बी मानने लगे हैं, पूजा-पाठ-कर्मकाण्ड करवाने वाले पुरोहित पण्डित तो यही मानते और मनवाते हैं, कुछ संस्कृत भाषा के श्लोकों से इसका समर्थन भी करते हैं- गजाननं भूतगणादि सेवितं .....। कहते हैं- यह सभी विघ्न-बाधाओं को दूर करने वाले हैं, यदि ''श्री गणेश'' स्मरण न किया जाए तो कार्यसिद्धि सम्भव ही नहीं हैं। अतः कहीं मिट्टी से, कहीं सुपारी पर, और कहीं गोमय पर ''श्री गणेश जी'' का आह्वानादि करते हैं। तब प्रश्न उठता है- क्या यह मान्यताएं सत्य हैं? सनातन हैं? वेदप्रतिपादित हैं? ब्राह्मणग्रन्थों में, उपनिषदों में, उपवेदों में, षड्दर्शनों में, वेद के षडंगों में और ऐतिहासिक रामायण एवं महाभारत में ऐसा माना गया है?

तो आइए देखते हैं संस्कृत भाषा में शब्द की व्युत्पत्ति धातु से होती है- गण संख्याने इस धातु से 'गण' शब्द सिद्ध होता है, इसके आगे ईश वा पति शब्द रखने से 'गणेश' और 'गणपति' शब्द सिद्ध होते हैं। ''ये प्रकृत्यादयो जडा जीवाश्च गण्यन्ते संख्यायन्ते तेषामीशः स्वामी, पतिः, पालको वा''- जो प्रकृत्यादि जड़ और सब जीव प्रख्यात पदार्थों का स्वामी वा पालन करने हारा है, इससे उस ईश्वर अर्थात् परमपिता परमात्मा का नाम ''गणेश'' वा ''गणपति'' है।

किन्तु यहाँ तो परमात्मा सिद्ध हुआ और परमात्मा को तो सभी मानते हैं, सर्वोपरि मानते हैं, देवो का भी देव होने से परमात्मा तो ''महादेव'' कहलाते हैं। किन्तु जैसा पूजा-पाठ, कर्मकाण्डादि में प्रचलित है, और इस भाद्रपद मास, शुक्लपक्ष की चतुर्थी तिथि से जैसे ''श्री गणेश जी'', ''गणपति बप्पा'' पूजे जाते हैं क्या इनका प्रथम पूज्य स्थान या ऐसे स्वरूप का वर्णन कहीं वेदों में, उपवेदों में, ब्राह्मण ग्रन्थों में, आरण्यकों में, उपनिषदों में, षड्दर्शनों में या वेदांगों में कहीं है?

तब उत्तर है- नहीं है। यह सब वर्णन पुराणों से पृथक् वैदिक साहित्य में कहीं नहीं है। फिर प्रश्न उठता है- कि वेदों में या वैदिक साहित्य में प्रथम पूजनीय कौन देव है? उत्तर है- **''अग्नि''**।

शेष अगले पृष्ठ पर

संपादकीय का शेष...

देखिए- वेदों के प्रथम क्रमांक पर विराजमान ऋग्वेद में प्रथम मन्त्र है- **''अग्निमीळे पुरोहितं''...,** सामवेद का प्रथम मन्त्र है- **''अग्न आयाहि वीतये''...,** ऐतेरेय ब्राह्मण कहता है- **''अग्नि वै देवानामवमो विष्णुः, परमस्तदन्तरेण सर्वा अन्या देवताः।''** इसके अतिरिक्त भी अनेक स्थानों पर अग्नि को प्रथम देवता माना और बतलाया गया है। यहाँ तक कि- जब हम प्रातःकाल जागते हैं तब प्रातःस्मरण करते हैं और प्रातःस्मरण में भी ऋग्वेद हो या अथर्ववेद प्रथम अग्नि का ही आह्वान् करते हैं-**'प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे ...।'** इन कतिपय उदाहरणों से सिद्ध है कि वैदिक धर्म में, वैदिक साहित्य में एवं वैदिक लोगों के जीवन में, षोड्श संस्कारों में सर्वत्र प्रथम एवं प्रधान देवता **''अग्नि''** है।

अतः जब तक हमारे पूर्वज अग्नि पूजक थे, अर्थात् अग्निहोत्री थे, अर्थात् प्रतिदिन दोनों समय प्रातःकाल एवं सायंकाल यज्ञ करते थे, पाक्षिक यज्ञ करते थे, ऋतुओं पर यज्ञ करते थे, पूरे-पूरे मास और पूरे-पूरे वर्षभर सांवत्सरिक महायज्ञ करते थे, ऋषि दयानन्द जी लिखते हैं- **''तब तक हमारे देश में रोग-शोक नहीं थे, यदि फिर से ऐसा ही करें तो ऐसा ही हो जावे।''**

किन्तु दुर्भाग्यपूर्ण है कि हम वैदिक धर्मियों ने न जाने कब और क्यों अपना प्रथम पूज्य देवता ही बदल डाला। जिस अग्नि के बल से वैज्ञानिकों ने नाना प्रकार अस्त्र-शस्त्र प्राप्त कर लिए अनेक प्रकार के आविष्कार कर लिए, जलयान, थलयान (वाहन), वायुयान बना लिए, पृथ्वी से चन्द्रमा और मंगलग्रह तक की यात्रा कर ली, हम उस देवताओं के भी मुखस्वरूप अग्नि को छोड़कर अवैदिक, काल्पनिक एवं पोंगापन्थी पौराणिक मान्यताओं के दास बनकर अपना धन, अपना साधन, अपना यौवन और अपना सम्पूर्ण जीवन व्यर्थ में ही व्यतीत करने लग गये। आज सारा विश्व जिस पर्यावरण प्रदूषण का रोना रो रहा है, यदि इसका सफल निदान, निराकरण कोई एक देवता कर सकता है- तो वह देवता है- **'अग्नि'।**

पाठकगणों! आइए! कल्पनालोक से, अवैदिक मान्यताओं से बाहर आइए! सार्वभौमिक, सार्वकालिक विज्ञानसिद्ध अपने वैदिक धर्मानुसार और अपने श्रेष्ठ पूर्वजों की श्रेष्ठ परम्पराओं के अनुसार जीवन जीना प्रारम्भ कीजिए। अन्यथा कल्पनाएं हमें कहीं का नहीं छोड़ेंगी। प्रथम पूजिए, अग्निहोत्र कीजिए अपने प्रथम देवता को प्रथम स्थान दीजिए।

# ''एक विकट समस्या- आश्रम व्यवस्था का विघटन''

- आचार्य सतीश

प्राचीन काल में हमारे ऋषियों द्वारा आश्रम व्यवस्था का स्वरूप रखा गया था। मनुष्य के जीवन को चार अश्रमों में बांटा गया था। जीवन के प्रथम भाग को ब्रह्मचर्य आश्रम कहा गया, जिसमें मनुष्य का कर्त्तव्य शिक्षा ग्रहण करना था। शिक्षा को जीवन के प्रारम्भिक भाग में रखकर ये सिद्ध कर दिया गया कि शिक्षा मनुष्य के जीवन के लिए कितनी आवश्यक है। इससे यही सिद्ध होता है कि जीवन का प्राथमिक उद्देश्य शिक्षा प्राप्त करना तथा ब्रह्म को जानना है। सर्वप्रथम ज्ञान प्राप्त करके ही भविष्य के जीवन में प्रवेश करें।

ब्रह्मचर्य आश्रम के बाद गृहस्थ आश्रम आता है जिसमें मनुष्य का कर्त्तव्य सृष्टि को आगे बढ़ाना तथा समस्त समाज का पालन है। ऋषि दयानन्द ने कहा है कि गृहस्थ में केवल वे प्रवेश करें जिन्होंने ब्रह्मचर्य आश्रम के दौरान अपने कर्त्तव्यों का पालन करते हुए इतनी योग्यता पा ली है अर्थात् जिसने ब्रह्मचर्य आश्रम में विद्या प्राप्त करके अपने आपको इस योग्य बना लिया है कि वह अपने गृहस्थ आश्रम के कर्त्तव्यों का पालन अच्छी प्रकार कर सकेगा। गृहस्थ आश्रम सभी आश्रमों का आधार माना गया है और इस रूप में भी यह सबसे महत्त्वपूर्ण है कि सभी आश्रमों का निर्वाह गृहस्थ के द्वारा ही होता है।

गृहस्थ आश्रम के बाद मनुष्य वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश करता है अर्थात् गृहस्थ के कर्त्तव्यों को पूरा करके धीरे-धीरे त्याग की भावना अपने अन्दर लाते हुए पूर्ण रूप से समाज सेवा में जुट जाए। बिना त्याग के सेवाभाव नहीं आता अतः वानप्रस्थी द्वारा धीरे-धीरे त्याग की भावना विकसित करनी चाहिए। वानप्रस्थ आश्रम एक प्रकार से संन्यास आश्रम की तैयारी का समय भी है। इस प्रकार वानप्रस्थ आश्रम में मनुष्य द्वारा प्राप्त ज्ञान व विद्या के माध्यम से जीवन को नई दिशा देनी होती है। जीवन काल में उसके बाद संन्यास आश्रम का स्थान है जो अन्त समय तक चलता है। इस काल में मनुष्य सर्वथा त्यागकर एक संन्यासी का जीवन जीना पड़ता है। वह समाज कल्याण, मानव कल्याण तथा अपने समस्त कार्य उत्थान के लिए ही करे।

आश्रम व्यवस्था केवल वैदिक दर्शन में पाई जाती है। जीवन की ऐसी समय-सारणी अन्य कहीं पर भी नहीं है। आश्रम व्यवस्था की एक अन्य महत्त्वपूर्ण व्यवस्था है कि इसमें अगले आश्रम की तैयारी पहले वाले आश्रम में ही शुरू हो जाती है। एक आश्रम में रहते हुए अगले आश्रम की तैयारी की जाती है जिससे अगली व्यवस्था में उसे कोई व्यवधान ना पड़े। जैसे- ब्रह्मचर्य आश्रम के आधार पर ही गृहस्थ आश्रम की व्यवस्था प्राप्त होती है। यदि ब्रह्मचर्य में संयम के साथ रहकर खूब विद्या अध्ययन किया गया है तो गृहस्थ आश्रम में प्रवेश के समय उसे अपने कर्त्तवयों को पूरा करने में कठिनाई नहीं होती। उसका जीविकोपार्जन ठीक चलता है। इसी गृहस्थ आश्रम में रहते हुए, अपने कर्त्तव्यों का पालन करते हुए यदि समाज से जुड़े तो आगे चलकर सहज रूप से ही वानप्रस्थ को अपना सकता है। इसी प्रकार वानप्रस्थ तो है ही संन्यास आश्रम की तैयारी का काल।

आज के समाज की मूलभूत समस्या यह है कि व्यक्ति गृहस्थ आश्रम में प्रवेश तो करते हैं, लेकिन निकल नहीं पाते। जीवन-पर्यन्त गृहस्थ ही होकर रह जाते हैं। बाद के दो आश्रमों को हमने बिल्कुल भुला दिया है। बच्चा जन्म लेने के बाद ब्रह्मचर्य आश्रम का सदस्य तो बन ही जाता है। माता-पिता उसे शिक्षा दिलाकर गृहस्थ आश्रम के योग्य बना देते हैं। ब्रह्मचर्य आश्रम के पूर्ण होने की भी कसौटी यही रह गई है कि वह रोजगार प्राप्त कर ले। उसकी बुद्धि का कितना विकास हुआ है, उसे अभी समाज से या अपने कौशल से कुछ और सीख लेना चाहिए, इसकी चिन्ता नहीं की जाती। गृहस्थ आश्रम प्रवेश की योग्यता को भी नकार दिया गया है। स्वामी दयानन्द ने कहा है कि केवल योग्य व जिसने ब्रह्मचर्य आश्रम का पालन पूरी लग्न व शक्ति से किया है उसी को विवाह करने की अनुमति है। जो गृहस्थ बनकर, दूसरों का बोझ उठाने में हर प्रकार से सक्षम हों उसी को विवाह का अधिकार है। आजकल तो हर व्यक्ति का जैसे अन्तिम लक्ष्य ही विवाह करना, सन्तानोत्पत्ति तथा अपना वंश बढ़ाना है। इसी कारण आज गृहस्थ अन्यों का बोझ उठाने में अपनी तत्परता नहीं दिखाता।

आज गृहस्थ अपने कर्त्तव्यों को पूरा कर पाने में सक्षम नहीं हो रहा है या अज्ञानता, स्वार्थ के कारण कर नहीं रहा है तो उसी का यह परिणाम है कि न तो अन्य आश्रमों की गरिमा बची और न ही अन्य आश्रमों में व्यक्तियों द्वारा अपने कर्त्तव्यों का पालन किया जा रहा है। ऐसी श्रेष्ठ व्यवस्था को स्थापित करके ही समाज में फैल रही कुरीतियों को समाप्त किया जा सकता है और एक श्रेष्ठ समाज का निर्माण किया जा सकता है।

# गृहस्थ सम्बन्ध : भाग-३

-आचार्य संजीव आर्य, मु०नगर,

गृहस्थ सम्बन्ध मात्र पति–पत्नी का ही सम्बन्ध नहीं है अपितु यह परिवार और समाज का सम्बन्ध भी है। दम्पत्ति का यह सम्बन्ध अपने साथ–साथ एक दूसरे के माता–पिता, भाई–बहन, दादी–दादा आदि के साथ भी जुड़ता है और संबंधित समाज से भी। जैसाकि कहा जाता है 'परिवार गुणों की प्रथम पाठशाला है।'

नववधु इस पाठशाला की नई प्रशिक्षु अध्यापिका है। वह प्रशिक्षण लेगी और भावी पीढी को सिखाएगी भी। यदि प्रशिक्षण में न्यूनता रही तो अध्यापन में न्यूनता रहना स्वाभाविक है। वधू–वर दोनों ही भावी पीढी के कर्णधार हैं, सनातन संस्कृति पगे–पगे जीवन को तैयारी के साथ जीना सिखाती है। अब तक वधू–वर दोनों अपने–अपने घर व गुरुकुल में भावी जीवन के प्रति तैयारी ही तो कर रहे थे। अब संस्कार होने लगा तो यह भी प्रशिक्षण ही है, यज्ञ के माध्यम से जीवन की तैयारी सिखाई जा रही है। यहां वधू पंचमहायज्ञ करने का विश्वास दिलाती है, और ये पंचमहायज्ञ गृहस्थ जीवन की संजीवनी हैं जो दंपत्ती अपने जीवन में इनका अभ्यास करते हैं वे यथोचित मनोवांछित फलों को प्राप्त किया करते हैं।

इन यज्ञों में ब्रह्मयज्ञ जिसमें अंगों के सहित वेदादि शास्त्रों का पढ़ना–पढ़ाना तथा संध्योपासन अर्थात् प्रातः और सायंकाल में ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना सभी को करनी चाहिए। यह ब्रह्मयज्ञ सनातन संस्कृति का इतना महत्वपूर्ण सूत्र है कि यदि सभी आर्यवंशी इसे पकड़ लें तो संसार के सभी मतमतांतरो पर हम भारी पड़ सकते हैं। यह सूत्र हमें कर्तव्य पथ से गिरने नहीं देगा, ऋषि दयानन्द ने वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सभी आर्यों के लिए परम कर्तव्य कहा है। क्योंकि घर से लेकर समाज, राष्ट्र और संसार को ठीक–ठीक चलाने के लिए सत्य सिद्धान्तों की आवश्यकता है, साथ ही आवश्यकता है उन सिद्धान्तों के प्रति श्रद्धा की, विश्वास की। जिससे उनको लोगों के जीवन में उतारा जा सके, क्योंकि जो सत्य जानते हैं और उस सत्य के प्रति श्रद्धा भी रखते हैं तब सत्याचरण होगा ही होगा। जहाँ सत्याचरण होता है वहाँ सुख का प्रसार होता है।

दूसरा है देवयज्ञ जिसमें विद्वानों का संग, सेवा, पवित्रता, दिव्यगुणों का धारण, दातृत्व, विद्या की उन्नति करना है। विद्वानों का संग और सेवा राष्ट्र में विद्या की वृद्धि का अत्यन्त महत्वपूर्ण कारण है, क्योंकि उनके संग और सेवा के कारण अर्थात् सम्मान के कारण दूसरों को भी विद्वान होने की प्रेरणा मिलती है। पवित्रता और दिव्यगुणों का धारण वैयक्तिक एवं सामाजिक जीवन को सरल, समुचित और धार्मिक बनाता है। दातृत्व स्वयं ही एक दिव्यगुण है जो मनुष्य को देव बना देता है। दान समाज में तरलता बनाए रखता है और परोपकार का प्रमुख कारण बनता है।

अब तीसरा पितृयज्ञ कहते हैं। उसके दो भेद हैं– एक तर्पण और दूसरा श्राद्ध। उनमें से जिस कर्म करके विद्वान, देव, ऋषि और पितरों को सुखयुक्त करते हैं, सो 'तर्पण' कहाता है। तथा जो उन लोगों की श्रद्धापूर्वक सेवा करना है, उसी को श्राद्ध जानना चाहिए। यह तर्पण आदि कर्म विद्यमान अर्थात् जीते हुवे जो प्रत्यक्ष हैं, उन्हीं में घटता है मरे हुवों में नहीं क्योंकि मृतकों का प्रत्यक्ष होना असम्भव है। इसलिए उनकी सेवा असम्भव है तथा उनके लिए कोई पदार्थ दिया चाहे वह भी उनको नहीं मिल सकता। गृहस्थ में इस पितृयज्ञ का बडा महत्व है, जहाँ विद्वान को पितर कहा गया है वहीं माता, पिता, बडे भाई–बहन, और सगे सम्बन्धी आदि भी अपने–अपने कर्तव्यों एवं महत्व के कारण पितर हैं। अतः वे सब भी श्राद्ध और तर्पण के अधिकारी हैं। पितरों का ये सत्कार हमें मनुष्य बनाए रखता है। पितरों को भी अपना व्यवहार यथा सम्भव मृदु, संयमित और धर्मानुकूल रखना चाहिए।

चौथा बलिवैश्वदेव यज्ञ जिसमें जब भोजन सिद्ध हो तब जो कुछ भोजनार्थ बने, खट्टा लवणान्न और क्षार को छोड़ के घृत मिष्टयुक्त अन्न लेकर चूल्हे से अग्नि अलग धर विधि पूर्वक नित्य होम किया जाता है और कुत्तों, कंगालों, कुष्ठी आदि रोगियों, कौए आदि पक्षियों और चींटी आदि कृमियों के लिए भी भोजन के भाग अलग–अलग बाँट कर देना। इसका प्रयोजन यह है कि परमात्मा की आज्ञा से विपरीत होके हम उसके उत्पन्न किये हुवे प्राणियों को कभी भी अन्याय से दुःख न देवें। किन्तु ईश्वर की कृपा से सब जीव हमारे मित्र और हम सब जीवों के मित्र रहें। ऐसा जानकर परस्पर सदा उपकार करते रहें।

पाँचवाँ अतिथि यज्ञ जिसमें– अतिथि उसको कहते हैं कि जिस की कोई तिथि निश्चित न हो अर्थात् अकस्मात् कोई धार्मिक, सत्योपदेशक, सब के उपकारार्थ सर्वत्र घूमने वाला, पूर्ण विद्वान, परमयोगी, संन्यासी गृहस्थ के यहाँ आवे तो उस को प्रथम पाद्य, अर्घ्य और आचमनीय तीन प्रकार का जल देकर, पश्चात् आसन पर सत्कारपूर्वक बैठाकर खान–पान आदि उत्तमोत्तम पदार्थों से सेवा सुश्रुषा करके उनको प्रसन्न करे। पश्चात् सत्संग कर उनसे ज्ञान विज्ञान आदि जिन से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति होवे, ऐसे–ऐसे उपदेशों का श्रवण करें और चाल–चलन भी उनके उपदेशानुसार रखें। प्रसंगानुकूल गृहस्थ और राजादि भी अतिथिवत् सत्कार करने के योग्य हैं। ये छोटे–छोटे उपाय सभ्यता की ईंटें हैं, एक–एक को ठीक स्थान पर रखते रहने से जीवन सुख से आवृत्त होता जाता है। अपनी परम्पराओं में सुख के सूत्र भरे पड़े हैं, आवश्यकता उन्हें ग्रहण करने की है।

यह प्रशिक्षण इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि गृहस्थ सम्बन्धों का स्थायित्व और साफल्य मनुष्य के जीवन की दिशा और दशा को अत्यन्त प्रभावित करता है। यदि मनुष्य के समक्ष जीवन का लक्ष्य और पथ स्पष्ट है तो वह उसके लिए प्रयास करेगा। उसके लिए छोटे विवाद, मोह, राग और आकर्षण कर्तव्य से बडे नहीं हो सकते। इसीलिए ऋषियों ने दम्पत्ती को राष्ट्रीय, सामाजिक और वैयक्तिक उन्नति के लक्ष्य दिये। इन्हीं के अनुसार दम्पत्ती को राष्ट्रभृत होम, जयाहोम और अभ्यातन होम करना होता है। इन तीन प्रकार के होम करते हुवे राष्ट्र, समाज और व्यक्ति की उन्नति हेतु प्रार्थना करता है साथ–साथ वह सीखते हैं कि यह उन्नति कैसे होगी और किन संसाधनों से होगी। राष्ट्र उन्नति के लिए वह सीखता है कि ब्रह्मशक्ति और क्षात्रशक्ति की उन्नति से ही राष्ट्र को समृद्ध एवं रक्षित रखा जा सकता है। अतः ब्रह्मशक्ति अर्थात् वेदविद्या और क्षात्रशक्ति अर्थात् राज्य का बल बढ़ाने के लिए जो हम कर सकते हैं या जो हमारी भूमिका हो सकती है उसे अवश्य पूरा करना चाहिए। सामाजिक बनने के लिए अपने मन, बुद्धि, चित्त पर समुचित नियन्त्रण होना ही चाहिए। **जो व्यक्ति स्वयं नियन्त्रित नहीं है, जिसको नियन्त्रित करने के लिए किसी दूसरे को बल प्रयोग करना पडता है वही असामाजिक तत्व है।** अतः स्वयं पर विजय पाकर ही व्यक्ति संसार में कुछ जीतने का अधिकारी है। ब्रह्मचर्य से विद्या प्राप्त करने के पश्चात् जब दोनों दाम्पत्य को स्वीकार करते हैं तब ये अपनी वैयक्तिक उन्नति के लिए किसी दूसरे को उत्तरदायी नहीं ठहरा सकते। अतः अपनी, समाज की व राष्ट्र की उन्नति के लिए अत्यन्त पुरुषार्थ करना ही है। जब एक बडा लक्ष्य सामने है तब छोटी बाधाएं, घर बाहर की समस्याएं हमें उतना दुःख नहीं दे सकतीं कि हमारा मार्ग रोक सकें। .....क्रमशः

## आओ यज्ञ करें!

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| अमावस्या | 28 सितम्बर | दिन-शनिवार | मास-आश्विन | ऋतु-शरद | नक्षत्र-उ0फाल्गुनी |
| पूर्णिमा | 13 अक्टूबर | दिन-रविवार | मास-आश्विन | ऋतु-शरद | नक्षत्र-उ0भाद्रपदा |
| अमावस्या | 28 अक्टूबर | दिन-सोमवार | मास-कार्तिक | ऋतु-हेमन्त | नक्षत्र-स्वाती |
| पूर्णिमा | 12 नवम्बर | दिन-मंगलवार | मास-कार्तिक | ऋतु-हेमन्त | नक्षत्र-भरणी |

# योग का शुद्ध स्वरूप

-आचार्य डॉ. महेश आर्य, भिवानी (हरियाणा)

आदि सृष्टि से संसार ऋषियों के सिद्धान्तों से सुख उठाता रहा है। जबसे मनुष्य ने ऋषियों के सिद्धान्तों से परे हटना शुरू किया तभी से मानव समाज पतन की तरफ बढ़ने लगा क्योंकि ऋषि नाम तर्क का है व उनके सिद्धान्त तर्क पर आधरित होने के कारण किसी भी प्रकार से प्रकृति, सृष्टिक्रम व वैज्ञानिकता को अवरूद्ध नहीं करते और साधारण मनुष्यों के सिद्धान्त देश, काल, परिस्थिति से प्रभावित होने के कारण सर्वमान्य, सार्वभौमिक व सार्वतान्त्रिक नहीं होते। अत: ऐसे सामान्य व्यक्तियों के सिद्धान्त किसी परिस्थिति विशेष में सुखकारी प्रतीत होते हुए भी अन्तत: दु:खकारी सिद्ध होते हैं।

मनुष्य स्वभावत: सामाजिक प्राणी होने के कारण अपनी बुद्धिनुसार समाज बनाने का प्रयत्न करता है अर्थात् अपने विचारों के अनुकूल समाज चाहता है। इसी कड़ी में आधुनिक युग में अनेक बुद्धिजीवी समाज निर्माण अपने-अपने सिद्धान्तों के अनुसार करते हैं, अगर ये सिद्धान्त सार्वभौमिक, वैज्ञानिक, सृष्टिक्रम के अनुकूल न हों तो मनुष्य के लिए, समाज के लिए दु:खकारी हो जाते हैं। इतिहास में हुए ऐसे शोध जिसमें भूतकाल में मनुष्य सुख उठा चुका हो, अगर ऐसे सिद्धान्तों को भी कोई व्यक्ति या तथाकथित संन्यासी तोड़-मरोड़कर जनता में पेश करे और उससे सुख ना मिले तो भविष्य में उसके शुद्ध स्वरूप को पुन: समाज में स्थापित करना अति दुष्कर बन जाता है।

ऐसा ही एक सिद्धान्त है 'योग'। जिसे आजकल बड़े जोर-शोर से प्रसारित करने का प्रयास कुछ तथाकथित संन्यासी कर रहे हैं। परन्तु आओ विचारें कि जिस उछल-कूद, व्यायाम को योग माना जा रहा है वह वास्तव में योग है या नहीं।

योग का नाम लेते ही हमें ऋषि पातञ्जलि का नाम अनायास ही याद आता है जो योगदर्शन में योग सूत्र लिखते हैं:-**'योगश्चित्तवृत्ति निरोध:'** अर्थात् चित्त की वृत्तियों के रोकने को योग कहते हैं। परन्तु क्या व्यायाम करने व उछल-कूद करने से चित्त की वृत्तियाँ विषयों से हटती हैं! नहीं! अगर ऐसा होता तो दुनिया के सभी बन्दर योगी होते। इसमें कोई सन्देह नहीं कि व्यायामादि से शरीर स्वस्थ रहता है परन्तु इससे परमात्मा से योग होगा, यह संभव नहीं।

ईश्वर जो सर्वज्ञ है (ब्रह्माण्ड की व्यवस्थित जटिल संरचनाओं को देखने से पता लगता है) सूक्ष्मतम है, उसे इन्द्रियों (आँख, कान आदि) से प्रत्यक्ष करना संभव नहीं। उसे तो सूक्ष्म आत्मा से ही प्राप्त (साक्षात्) किया जा सकता है, उसको प्रत्यक्ष करने हेतु ऋषि पातञ्जलि ने योगदर्शन में इसे अष्टांग योग के नाम से प्रतिपादित किया जिसका सूत्र है- **यमनियमासन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाधयोऽष्टावङ्गानि।** अर्थात् यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। बिना इसके विधिवत पालन किए कोई भी किसी भी परिस्थिति में उसके आनन्द अर्थात् समाधि तक नहीं पहुँच सकता है।

सबसे पहले यम जो पाँच है:- अंहिसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। यम हमारे सामाजिक जीवन को नियन्त्रित करते हैं इनके पालन करने से हमारे जीवन में सामाजिक समस्याएँ नहीं रहती। दूसरा नियम जो पाँच हैं:- शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान, ये नियम हमारी व्यक्तिगत समस्याओं को खत्म करती हैं बशर्ते हम इन्हें ठीक से समझ कर (ऋषियों अनुसार) जीवन में धारण करें।

तीसरा आसन **'स्थिरसुखमासनम्'** अर्थात् ऐसी अवस्था जिसमें शरीर सुख अवस्था में स्थिर रहे, कमर गर्दन सीधी, आँखें बन्द रहें और ये इस प्रकार हैं:- **पद्मासन, अर्धपद्मासनम्, सुखासन (आलथी-पालथी)** आदि। इनके अलावा बाकी शरीरिक क्रियाएँ एवं मुद्राएँ हैं।

चौथा प्राणायाम- जिसमें आज सबसे अधिक घालमेल है। तथाकथित संन्यासी (संन्यास वस्त्रधारी) जिस हठयोग को ऋषियों ने मना किया है वही प्राणायाम के रूप में करवाकर वास्तविक प्राणायाम के लाभों से लोगों (मन की स्थिरता व शारीरिक रोगनाशकता) को वंचित करवा रहे हैं। ऋषि पतञ्जलि कहते हैं:- **'तस्मिन्सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेद: प्राणायाम:'** अर्थात् श्वास-प्रश्वास की गति में विराम का नाम प्राणायाम है और ये मात्र चार हैं:- **बाह्याभ्यन्तस्तम्भवृत्तिर्देशकालसंख्याभि: परिदृष्टो दीर्घसूक्ष्म:, बाह्याभ्यन्तरविषयाक्षेपी चतुर्थ:।** अर्थात् बाह्य प्राणायाम, आभ्यन्तर प्राणायाम, स्तम्भवृत्ति प्राणायाम और बाह्याभ्यान्तर विषयाक्षेपी प्राणायाम। इनके अलावा प्राणायाम न होकर मात्र श्वास-प्रश्वास क्रियाएँ हैं।

पाँचवां- प्रत्याहार अर्थात् मन को चित्त के साथ (अर्थात रूप, शब्द, गन्ध, रस व स्पर्श की स्मृतियों से जोड़ना) जोड़ना जिसे ऋषि पतञ्जलि कहते हैं- **स्व विषयासंप्रयोगेचित्तस्य स्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहार:।**

छठा- धारणा अर्थात् **'देशबन्धश्चित्तस्य धारणा।'** अर्थात् मन को हृदय प्रदेश में (नाभि से ऊपर, कण्ठ से नीचे, दोनों स्तनों के बीच) टिकाकर 'ओ३म्' का मानसिक उच्चरण, उसके अर्थ का चिन्तन अर्थात् ईश्वर सर्वज्ञ, निराकार, चेतन, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, दयालु, न्यायकारी सत्ता है और उसी में समाहित होने की भावना। इस अवस्था में बार-बार मन इन्द्रियों से लगेगा, जिसे पुन: पुन: हृदय प्रदेश में डूबने की भावना करना ही धारणा है और यही धारणा जब परिपक्व अर्थात् मन, हृदय प्रदेश मे टिक जाता है उसे ध्यान कहते हैं:- **'तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्।'** ध्यान में ईश्वर, मन व आत्मा तीनों का अहसास बना रहता है।

जब ध्यान परिपक्व होता है तब केवल एक ही अहसास रहता है और वह है परमात्मा। जैसे लोहे के गोले को अग्नि में तपाते हैं तो कुछ समय बाद लोहा अग्निमय हो जाता है उसी प्रकार समाधि की अवस्था में मन, आत्मा के रहते हुए भी सब परमात्मा-मय हो जाता है। इस अवस्था का नाम समाधि है जिसे ऋषि पतञ्जलि कहते हैं **'तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधि:।** और समाधि की भी कई उच्चतर भूमियाँ हैं।

उपरोक्त सब विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि योग आवस्था में मनुष्य परमात्मा का साक्षात् करता है और उसके आनन्द को अनुभूत करता है व इसे प्राप्त करने के लिए वह चक्रवर्ती राज्य को भी ठुकरा सकता है। बस आवश्यकता है केवल उसे इस का अहसास कराने की और यही योग मनुष्य को नैतिकता की पराकाष्ठा तक पहुँचाकर उसे देवत्व प्राप्त कराता है। परन्तु इन तथाकथित बाबाओं, संन्यासी, महात्माओं के योग से संसार को अपूर्णीय क्षति हो रही है। इससे भविष्य में हम वास्तविक योग को न मानकर उछल-कूद को ही योग मानेंगे और संसार में यम-नियमों की उपेक्षा होकर नैतिकता व देवत्व की बहुत बड़ी हानि होगी।

अत: आओ ऋषि पतञ्जलि के 'अष्टांग योग' को जीवन में धारण करें और मनुष्यता के चरम लक्ष्य समाधि की तरफ बढ़ें। इसी में परमानन्द है।

इति ओ३म् शम्।

# व्यवहारभानुः - आचरण की शिक्षा के लिए ऋषि का श्रेष्ठ ग्रन्थ

ऋषि दयानन्द ने वेद के सिद्धान्तों को जनसामान्य तक पहुँचाने के लिए अन्य कार्यों के साथ-साथ एक पूर्णकालिक लेखक के रूप में भी अनेकों ग्रन्थों की रचना की है। उन्होंने विशुद्ध व्याकरण के ग्रन्थों से लेकर वेदभाष्य तक व सत्यार्थ प्रकाश जैसे कालजयी ग्रन्थ से लेकर सामान्य सिद्धान्त अनुरूप व्यवहार के लिए व्यवहारभानु जैसी सामान्य जन के लिए भी अत्यन्त उपयोगी पुस्तकों की रचना की है। ऋषि का एक-एक शब्द व पंक्ति व्यक्ति के लिए अमूल्य प्रेरणा का स्रोत है। आइए उनकी व्यवहारभानुः पुस्तक के स्वाध्याय द्वारा वैदिक सिद्धान्तों के परिपालन की दिशा में आगे बढ़कर अपने-अपने आचरण को वेदानुकुल बनाएं और ऋषि के ही शब्दों के अनुरूप- **''अपने तथा अपने-अपने सन्तान तथा विद्यार्थियों का आचार अत्युत्तम करें, कि जिससे आप और वे सब दिन सुखी रहें।''**

यहाँ प्रस्तुत है व्यवहारभानुः पुस्तक, आईये इसका स्वाध्याय करते हैं। ध्यान से पढ़ें तथा विचार करें कि यदि हम ऋषि के बताए अनुसार व्यवहार करते हैं तो हम कितना अपना व दूसरों का हित कर सकते हैं और समाज में व्याप्त अनेक प्रकार के दुर्व्यवहारों से न केवल स्वयं बच सकते हैं अपितु अपनी सन्तानों तथा शिष्यों को भी बचा सकते हैं।

**इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि॥ १॥** - यजुः० अ० १। मं० ५॥
**सत्यमेव जयति नाऽनृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः।**
**येनाक्रमन्त्यृषयो ह्याप्तकामा यत्र तत्सत्यस्य परमं निधानम्॥ २॥**
-मुण्ड० ३। खं० १ म० ६

**न हि सत्यात्परो धर्मो नानृतात् पातकं परम् ॥३॥** इत्यादि ।

**अर्थ**-मनुष्य में मनुष्यपन यही है कि सर्वथा झूठ व्यवहारों को छोड़कर सत्य व्यवहारों को ग्रहण सदा करे।

क्योंकि सर्वदा सत्य ही का विजय और झूठ का पराज्य होता है, इसलिए जिस सत्य से चलके धार्मिक ऋषि लोग जहाँ सत्य की निधि परमात्मा है, उसको प्राप्त होकर आनन्दित हुये थे, और अब भी होते हैं, उसका सेवन मनुष्य लोग क्यों न करें?

यह निश्चित है कि न सत्य से परे कोई धर्म और न असत्य से परे कोई अधर्म है। इससे वे धन्य मनुष्य हैं, जो सब व्यवहारों को सत्य ही से करते और झूठ से युक्त कर्म किञ्चिन्मात्र भी नहीं करते हैं।

**[ झूठे ग्राहक और झूठे बजाज का दृष्टान्त ]**

**दृष्टान्त**- एक किसी अधर्मी मनुष्य ने किसी अधर्मी बजाज की दुकान पर जाकर कहा कि- ''यह वस्त्र कितने आने गज देगा?'' वह बोला कि सोलह आने, तुम भी कुछ कहो।'' बजाज और ग्राहक दोनों जानते ही थे कि यह दस आने गज का कपड़ा है, परन्तु अधर्मी झूठ बोलने में कभी नहीं डरते।

**ग्राहक**- छह आने गज दो और सच-सच लेने-देने की बात करो। **बजाज**-अच्छा तो तुमको दो, आने छोड़ देते हैं, चौदह आने दो। **ग्राहक**-है तो टोटा परन्तु सात आने ले लो। **बजाज**-अच्छा तो सच-सच कहूँ? **ग्राहक**-हाँ।, **बजाज**-चलो एक आना टोटा ही सही, तेरह आने दो। तुमको लेना हो तो लो। **ग्राहक**-मैं सत्य-सत्य कहता हूँ कि इसका आठ आने से अधिक कोई भी तुमको न देगा। **बजाज**-"तुमको लेना हो तो लो, न लेना हो तो मत लो। परमेश्वर की सौगन्ध बारह आने गज तो मुझको पड़ा है, तुमको भला मनुष्य जानकर मैं दे देता हूँ। **ग्राहक**-धर्म की सौगन्ध, मैं सच कहता हूँ तुझको देना हो तो दो, पीछे पछतावेगा। मैं तो दूसरे की दुकान से ले लूँगा। क्या तुम्हारी एक ही दुकान है? नौ आने गज दे दो, नहीं तो मैं जाता हूँ। **बजाज**-तुमने कभी ऐसा कपड़ा खरीदा भी है? नौ आने गज लाओ मैं सौ रुपये का लेता हूँ।

ग्राहक धीरे-धीरे चला कि मुझको बुलाता है वा नहीं। बजाज तिरछी नजरो से देखता रहा कि देखें यह लौटता है, वा नहीं। जब वह न लौटा तब बोला-सुनो इधर आओ। **ग्राहक**-क्या कहते हो नव आने पर दोगे? **बजाज**-ए लो धर्म से कहता हूँ कि ग्यारह आने भी दे दो। **ग्राहक**-साढ़े नव आने लो। कहकर कुछ आगे चला। बजाज ने समझा कि हाथ से गया। अजी इधर आओ-आओ। **ग्राहक**-क्यों तुम देर लगाते हो ? व्यर्थ काल जाता है। **बजाज**-मेरे बेटे की सौगन्द। तुम इसको न लोगे तो पछताओगे? अब मैं सत्य ही कहता हूँ कि साढ़े दश आने दे दो नहीं तो तुम्हारी राजी।

**ग्राहक**-मेरी सौगन्द। तुमने दो आने अधिक लिये हैं। अच्छा दश आने देता हूँ, इतने का है तो नहीं। **बजाज**-अच्छा सवा दश आने भी दोगे? **ग्राहक**-नहीं-नहीं। **बजाज**-अच्छा, आओ बैठो कितने गज लोगे? **ग्राहक**-सवा गज। **बजाज**-अजी कुछ अधिक लो। **ग्राहक**-"अच्छा, नमूना ले जाते हैं। अब तुम्हारी दुकान देख ली। फिर कभी आवेंगे तो बहुत लेंगे। बजाज ने नापने में कुछ सरकाया। **ग्राहक**-अजी देखें तो, तुमने कैसा नापा? **बजाज**-क्या विश्वास नहीं करते हो? हम साहूकार हैं वा ठट्ठा है? हम कभी झूठ कहते और करते हैं? **ग्राहक**-हाँ जी, तुम बड़े सच्चे हो। एक रुपया कहकर दश आने तक आये, छः आना घट गये, अनेक सौगन्द खाईं। **बजाज**-वाह जी वाह! तुम बड़े सच्चे हो? छह आने कहकर दश आने तक लेने को तैयार हो। अनेक सौगन्द खा-खाकर आये। सौदा झूठ के विना कभी नहीं हो सकता।

**ग्राहक**-तू बड़ा झूठा है। **बजाज**-क्या तू नहीं है? क्योंकि एक गज कपड़े के लिये कोई भी भला मनुष्य इतना झगड़ा करता है? **ग्राहक**-तू झूठा तेरा बाप। हमारी सात पीढ़ी में कोई झूठा भी हुआ है? **बजाज**-तू झूठा, तेरा सात पीढ़ी भी झूठी। ग्राहक ने ले जूता एक मार दिया, बजाज ने चट गज मारा। अड़ोसी-पड़ोसी दुकानदारों ने जैसे-तैसे छुड़ाया। **बजाज**-चल-चल, जा तेरे जैसे लाखों देखे हैं। **ग्राहक**-चलबे तेरे जैसे जुवा चोर, टटपूंजिये दुकानदार मैंने करोड़ों देखे हैं। **अड़ोसी-पड़ोसी**-अजी झूठ के बिना कभी सौदा भी होता है? जा ओजी तुम अपनी दुकान पर बैठो और जाओ जी, तुम अपने घर को। **बजाज**-यह बड़ा दुष्ट मनुष्य है। **ग्राहक**-अबे मुख सम्हाल के बोल। **बजाज**-तू क्या कर लेगा? **ग्राहक**-जो मैंने किया सो तैने देख लिया और कुछ देखना हो तो दिखला दूँ। **बजाज**-क्या तू गज से न पीटा जायेगा? फिर दोनों लड़ने को दौड़े। जैसे-तैसे लोगों ने अलग-अलग कर दिये। ऐसे ही सर्वत्र झूठे लोगों की दुर्दशा होती है।

**धार्मिकों का दृष्टान्त-**

**ग्राहक**-इस दुशाले का क्या मूल्य है। **बजाज**-पाँच सौ रुपये। **ग्राहक**-अच्छा लीजिए। **बजाज**-"लो दुशाला।"

**[ सच्चे बजाज और झूठे ग्राहक का दृष्टान्त ]**

सच्चे दुकानेवाले के पास कोई झूठा ग्राहक गया, [और पूछां-] इस दुशाले का क्या लोगे? **बजाज**-अढ़ाई सौ रुपये। **ग्राहक**-दो सौ लो। **सेठ**-जाओ, यहाँ तुम्हारे लिए सौदा नहीं है। **ग्राहक**-अजी! कुछ तो कम लो। **साहूकार**-यहाँ झूठ का व्यवहार नहीं है, बहुत मत बोले। लेना हो तो लो, नहीं चले जाओ। ग्राहक दूसरी बहुत दुकानों में माल देख मूल्य करके, फिर वहीं आके अढ़ाई सौ रुपये देकर दुशाला ले गया।

-क्रमशः ....

# जीवन भर मनुष्य नहीं बन पाते है - आर्य

चापानेर ● स्वदेश समाचार

व्यक्ति अपने जीवन में डाक्टर, इंजीनियर, न्यायाधीश, नेता आदि बन जाते है परंतु वे जीवन भर मनुष्य नहीं बन पाते है। व्यक्ति इंजीनियर बन जाता और कुछ इंजीनियर सरिया-सीमेंट खा जाते, डाक्टर बनकर कुछ डाक्टर किडनी बेच देते है, न्यायाधीश बन जाते है पर कुछ न्यायाधीश स्वार्थ के चलते न्याय बेच देते है, नेता बन जाते है और कुछ नेता भ्रष्टाचार कर देते है। यह बात आक्याजागीर, चापाखेड़ा हायर सेकंडरी स्कूल में आयोजित राष्ट्रीय आर्य छात्र सभा के दौरान दिल्ली से पधारे आचार्य श्री राजेश आर्य ने कहे।

इस दौरान कैलाश आर्य, कन्हैयालाल आर्य, मोहनलाल आर्य, राधेश्याम आर्य, मदनलाल आर्य, गोविंदलाल आर्य, रणछोड़ आर्य, रामचन्द्र आर्य भी रहे सदाशिव आर्य के मार्गदर्शन में सम्पन्न हुआ। आक्याजागीर में हुए कार्यक्रम के दौरान जगदीश परमार, सचिन सन्त श्रीमती स्नेहलता भट्ट, श्रीमती कांता सुरावत, कैलाश सालित्रा, बद्रीलाल सालित्रा, राजेश परिहार, कमलेश चौहान शिक्षक और छात्र उपस्थित थे वहीं चापाखेड़ा हायर सेकंडरी स्कूल में जगदीशचन्द्र सागित्रा, मांगीलाल पाटीदार, रामेश्वर ररोतिया, सुनील व्यास, व्यंकट वाक्तरिया, कन्हैयालाल बम्बोरिया, रामनिवास भण्डारी, शिवानी वाक्तरिया आदि शिक्षक और छात्र-छात्राएं उपस्थित रहे। श्री आर्य ने हाल ही में खाचरौद के इम्पीरियल स्कूल, राज राजेन्द्र स्कूल, जयंतसेन स्कूल, वर्धमान स्कूल, उड़ान स्कूल, प्रियंका मेमोरियल स्कूल, शा. मॉडल स्कूल, शा. उत्कृष्ट स्कूल, शा. कन्या विद्यालय, वहीं ग्रामीण क्षेत्र के बटलावदी, मड़ावदा, रुनखेरा, आक्याजागीर, चापाखेड़ा इत्यादि गांव के स्कूलों में पहुंच कर 3000 से भी अधिक छात्रों को नैतिक शिक्षा एवं राष्ट्र निर्माण के गुणों के ऊपर सम्बोधित कर चुके है।

## 16 अगस्त-14 सितम्बर 2019 भाद्रपद ऋतु- शरद

| सोमवार | मंगलवार | बुधवार | गुरुवार | शुक्रवार | शनिवार | रविवार |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 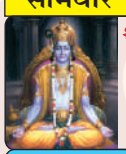 श्री कृष्णचन्द्र जयन्ती भाद्रपद कृष्ण अष्टमी 24 अगस्त | | | | धनिष्ठा कृष्ण प्रतिपदा 16 अगस्त | शतभिषा कृष्ण द्वितीया 17 अगस्त | पूर्वाभाद्रपदा कृष्ण तृतीया 18 अगस्त |
| उत्तराभाद्रपदा कृष्ण चतुर्थी 19 अगस्त | रेवती कृष्ण पंचमी 20 अगस्त | अश्विनी कृष्ण षष्ठी 21 अगस्त | भरणी कृष्ण षष्ठी 22 अगस्त | कृतिका कृष्ण सप्तमी 23 अगस्त | रोहिणी कृष्ण अष्टमी 24 अगस्त | मृगशिरा कृष्ण नवमी 25 अगस्त |
| आर्द्रा कृष्ण दशमी/एकादशी 26 अगस्त | पुनर्वसु कृष्ण द्वादशी 27 अगस्त | पुष्य कृष्ण त्रयोदशी 28 अगस्त | आश्लेषा कृष्ण चतुर्दशी 29 अगस्त | मघा कृष्ण अमावस्या 30 अगस्त | पू॰ फाल्गुनी शुक्ल प्रतिपदा 31 अगस्त | उ॰ फाल्गुनी शुक्ल द्वितीया/तृतीया 1 सितम्बर |
| हस्त शुक्ल चतुर्थी 2 सितम्बर | चित्रा/स्वाती शुक्ल पंचमी 3 सितम्बर | विशाखा शुक्ल षष्ठी 4 सितम्बर | अनुराधा शुक्ल सप्तमी 5 सितम्बर | ज्येष्ठा शुक्ल अष्टमी 6 सितम्बर | मूल शुक्ल नवमी 7 सितम्बर | मूल शुक्ल दशमी 8 सितम्बर |
| पूर्वाषाढ़ा शुक्ल एकादशी 9 सितम्बर | उत्तराषाढ़ा शुक्ल द्वादशी 10 सितम्बर | श्रवण शुक्ल त्रयोदशी 11 सितम्बर | धनिष्ठा शुक्ल चतुर्दशी 12 सितम्बर | शतभिषा शुक्ल चतुर्दशी 13 सितम्बर | पूर्वाभाद्रपदा शुक्ल पूर्णिमा 14 सितम्बर | |

## 15 सितम्बर-13 अक्टूबर 2019 आश्विन ऋतु- शरद

| सोमवार | मंगलवार | बुधवार | गुरुवार | शुक्रवार | शनिवार | रविवार |
|---|---|---|---|---|---|---|
| शुक्ल विजय दिवस आश्विन शुक्ल दशमी 8 अक्टूबर | | | | | | उत्तराभाद्रपदा कृष्ण प्रतिपदा 15 सितम्बर |
| रेवती कृष्ण द्वितीया 16 सितम्बर | अश्विनी कृष्ण तृतीया 17 सितम्बर | अश्विनी कृष्ण चतुर्थी 18 सितम्बर | भरणी कृष्ण पंचमी 19 सितम्बर | कृतिका कृष्ण षष्ठी 20 सितम्बर | रोहिणी कृष्ण सप्तमी 21 सितम्बर | मृगशिरा कृष्ण अष्टमी 22 सितम्बर |
| आर्द्रा शुक्ल नवमी 23 सितम्बर | पुनर्वसु शुक्ल दशमी 24 सितम्बर | पुष्य शुक्ल एकादशी 25 सितम्बर | आश्लेषा शुक्ल द्वादशी 26 सितम्बर | मघा शुक्ल त्रयोदशी/चतुर्दशी 27 सितम्बर | उ॰ फाल्गुनी कृष्ण अमावस्या 28 सितम्बर | हस्त शुक्ल प्रतिपदा 29 सितम्बर |
| चित्रा शुक्ल द्वितीया 30 सितम्बर | स्वाती शुक्ल तृतीया 1 अक्टूबर | विशाखा शुक्ल चतुर्थी 2 अक्टूबर | अनुराधा शुक्ल पंचमी 3 अक्टूबर | ज्येष्ठा शुक्ल षष्ठी 4 अक्टूबर | मूल शुक्ल सप्तमी 5 अक्टूबर | पूर्वाषाढ़ा शुक्ल अष्टमी 6 अक्टूबर |
| उत्तराषाढ़ा शुक्ल नवमी 7 अक्टूबर | श्रवण शुक्ल दशमी 8 अक्टूबर | धनिष्ठा शुक्ल एकादशी 9 अक्टूबर | शतभिषा शुक्ल द्वादशी 10 अक्टूबर | पूर्वाभाद्रपदा शुक्ल त्रयोदशी 11 अक्टूबर | पूर्वाभाद्रपदा शुक्ल चतुर्दशी 12 अक्टूबर | उत्तराभाद्रपदा शुक्ल पूर्णिमा 13 अक्टूबर |

# Rishi Dayanand - His Life And Work

-Saroj Arya, Delhi

Swamiji happens to be present in the Samaj at the time, the member present requested him to give his opiniom on some points. He replied that he had no right to do so, as he was not a member of the Antaranga Sabha. And he never gave his opinion till he had been elected a member of the Executive Committee. All these anecdotes contain the most valuable lessons for the Arya Samaj. Gurudom in course of time becomes as bad as 'idol-worship' which Swamiji so emphatically denounced and a seer as he was, he perceived real danger in allowing himself to be deified. History tells us societies based on adoration of persons fall a prey to mental thraldom which leads to moral, intellectual as well as spiritual emasculation.

Swamiji paid visits to other important towns of the Punjab, namely, Amritsar, Jullundur, Ferozapur, Rawalpindi, Jhelum, Gujrat, Wazirabad, Gujranwala and Multan. In all, he devoted more than a year and a half to his work in Punjab. Somehow Swamiji had found a better soil for sowing the seeds of his mission. In spite of his strenuous effort to propagate Vedic truths in U.P., Bengal and Bombay, the general populace seemed non-chalant, and much success did not seem to attend his work. Here the case was different, his ideas seemed to take root in the minds of people. There were reasons behind this phenomenon. The Hindus of the Punjab have suffered rigorous of frequent invasions the most, and are ever ready to rally round a leader who can take them out of the stupor of depression and defeatism, remind them of their race and tell them that there is still hope for them. Moreover, the conservatism and defeatism remind them of their race and tell them that there is still hope for them. Moreover, the conservatism and ignorance in which the whole of India was steeped during Muslim rule had received a rude shaking at the hands of guru Nanak and his successors in Punjab. They had tried to turn people from stocks and stoned towards the worship of the living, loving God, had shown the futility of ceremonial observances to achieve salvation, and had liberated the Hindus from that fatal feeling of inferiority which was eating into the vitals of society. With acquisition of power by the Sikhs, Came corruption and exhaustion, and the followers of the Gurus went back to the observances from which their forefathers had been weaned. It was at such a moment that our hero dawned in this land of Five Rivers, a stagnant pool spread over with a thick layer of dirty green scum. He tried to remove it, let in upon it the light which he symbolized. Some preferred to sleep on, but many flocked to catch a spark of the light that was his.In july, 1878, Swamiji left the Punjab for the United Provinces of Agra and Oudh, In the course of this tour he visited Roorkee, Aligarh, Meerut, Delhi, Ajmer, Dehradoon, Moradabad, Bareilly, Shahjahanpur, Farrukhabad, Mirzapur, Banaras and Agra. He saw an Arya Samaj established at each of these places to carry on the mission which he had started. It was now the wish of the Swami to make the states of Rajputana his sphere of work. The rulers of these states were Hindu by faith and in their veins flowed the blood of Rajputs who had held aloft the banner of Vedic Dharma against overwhelming odds. Here was a land consecrated by the blood of martyrs, which might prove a better soil than the Punjab even. Even if one of the potentates of these states become a sincere follower of his, what could be not do with the wealth and power at his, what could he not do with the wealth and power at command, and if some of them gave up the immoral, undignified and idle life they were leading, and began to look after the welfare of their subjects in right earnest, what immeasurable good they could do to the people entrusted to their care?

On the 10th of March, 1881, he left Agra for Bharatpur, where he stayed for a fortnight lecturing and preaching during the period of stay, there after he left for jaipur, where mor than a month was spent. Leaving Jaipur he reached Ajmer, where he delivered as many as 37 lectures during the course of a month and a half. Paying short visits to Massoda and Rajpura, Swamiji reached Chittaurgarh late in October, 1881. The Maharana was greatly struck by Swamiji's personality and eloquence. The latter addressed him and his chiefs for some time on the art of Government, particularly emphasising the fact that all the officers to whom the welfare of the state is entrusted should be models of purity and good conduct.

To be continued...

# द्विदिवसीय आर्य/आर्या प्रशिक्षण के बाद सत्रार्थियों के अनुभव

मैंनें गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय से पाँच वर्षों तक बी.एस.सी. व एम.एस.सी. का अध्ययन किया। लेकिन मैं आर्यावर्त एवं आर्यो से अनजाान रहा। अपने पूर्वजों से अनजान रहा, मैं आचार्य श्री और इस सत्र का आभारी हूँ जिन्होंने मुझे आर्यावर्त और पूर्वजों से परिचित कराया। धन्यवाद। जय आर्य, जय आर्यावर्त।

**नामः प्रमोद, आयुः २६ वर्ष, योग्यताः एम.एस.सी., कार्यः केमिस्ट, पताः हरिद्वार, उत्तराखण्ड।**

सत्र में क्रमशः सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया, ईश्वर को नये आगन्तुकों की सहमति लेते हुए सिद्ध किया गया, समाज में फैली भ्रान्तियों एवं पाखण्डों को तर्क संगत उदाहरण देते हुये स्पष्ट किया गया। आयोजकों व आगन्तुकों का समय महत्वूर्ण है, इसलिये व्यर्थ की कथा न कर, कम टू द प्वाइंट बात की गई है, बीच-बीच में मंत्र व गीत के माध्यम से श्वासोछवास व मन सामान्य कर अगली बात को ध्यान से सुन समझ सकें। एक अति महत्वपूर्ण साहसिक योजनाबद्ध प्रयास, राष्ट्र के प्रति समर्पित भाव से हृदय, मन, शरीर की इंद्रियों को संगठित कर कहे गये शब्द अति प्रभावशाली दिखे। 2 दिन के सत्र ने वर्षों से मस्तिष्क में भरी भ्रम की धूल हटा दी, आपको ''कोटिशः धन्यवाद''।

इदं राष्ट्राय इदं न मम:।

सर्वस्वसमर्पण भावना से ओत-प्रोत निर्देश के प्रतीक्षावत्।

**नामः दीपक अरोड़ा, आयुः ४४ वर्ष, योग्यताः स्नातक, कार्यः पंचगव्य चिकित्सक, पताः गोविन्द्र नगर कानपुर।**

वाट्सअप के योग ग्रुप में डॉ. अमित योगी के सहयोग से इस गोष्ठी की जानकारी हुई। कई दुविधा खत्म हुई। राष्ट्र-निर्माण की काफी अच्छी जानकारी हुई। मेरा बहुत धन्यवाद। इस तरह के शिविर जल्दी-जल्दी व अन्य जगहों पर लगने चाहियें। प्रचार-प्रसार की विशेष आवश्यकता है। सत्र सुनते ही रोंगटे खड़े हो गये। आँखों में आँसू आ गये राष्ट्र की दुदर्शा सुनकर। मैं संकल्प लेता हूँ कि राष्ट्र की रक्षा के लिये भरसक प्रयास करूगां। आप सभी व्यवस्थापकों का बहुत सराहनीय प्रयास।

एक चिकित्सक के रूप में। एक युवा वर्ग के प्रेरक के रूप में सहयोग रहेगा।

**नामः डॉ. अभिषेक दीक्षित, आयुः ३७ वर्ष, योग्यताः बी.एच.एम.एस, कार्यः प्राइवेट चिकित्सक, पताः कानपुर नगर।**

बहुत अच्छा रहा तथा आचार्यों द्वारा सत्र को बहुत अच्छी तरह से तथा विद्यार्थियों को बहुत सरल तरीके से ज्ञान दिया गया। और यह सत्र सभी के लिए बहुत ही motivational और inspirational रहा, ऐसे सत्र की वर्तमान में बहुत आवश्यकता है क्योंकि आज के युवाओं की स्थिति बहुत दयनीय हो गयी है। देश के निर्माण के लिए युवाओं का प्रशिक्षित होना बहुत आवश्यक है।

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा के लिए मैं अपना तन, मन और धन देना चहता हूँ ये राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा के लिए छात्रसभा जैसी कक्षा चलाना चहता हूँ।

**नामः अरुण आर्य, आयुः २९ वर्ष, योग्यताः स्नातक, कार्यः नौकरी, पताः गौतम बुद्ध नगर, उत्तर प्रदेश।**

बचपन की याद ताजा हुई। जब मैं आर्यवीर दल कैम्प मैं जाया करता था, पर कुछ गलत मनुष्यों से दोस्ती कर कर, गलत व्यसनों में पड़ कर अपना बहुत कुछ खो कर, दोबारा आर्य समाज में आया और प्रण किया कि अब कभी भी आर्यसमाज से विमुख नहीं होऊँगा। और जीवन भर आर्य समाज के नियमों पर चलने का प्रण करता हूँ। और इस 2 दिन के सत्र को सुनकर बहुत-बहुत खुशी भी और गर्व महसूस कर रहा हूँ।

प्रचार एवं आर्थिक सहयोग रहेगा।

**नामः दीपक कुमार आर्य, आयुः ३४ वर्ष, योग्यताः १२, कार्यः नौकरी, पताः गौतम बुद्ध नगर, उत्तर प्रदेश।**

1. पहले मैं और मेरा परिवार मूर्ति पूजा करता था अब मैं संकल्प लेकर मूर्ति पूजा बंद कर रहा हूँ और अपने परिवार को इसका ज्ञान दूँगा। 2. मुझे पहले आर्यों के इतिहास के बारे में जानकारी नहीं थी अब मुझे इसकी जानकरी हुयी है। 3. मुझे कुछ इतिहास की जानकारी भी हमारे आदरणीय गुरु पथ प्रदर्शक के द्वारा स्पष्ट रूप में कराई गयी। 4. मुझे हिन्दू के बारे में जानकारी नहीं थी इसका ज्ञान मुझे हुआ। 5. आर्यों की श्रेष्ठता का ज्ञान नहीं था। अब मुझे आर्यों की श्रेष्ठता एवं उनकी महानता का अनुभव हुआ है। 6. मैं अपने भाई बन्धु को आर्यों के आचार-विचार के बारे में जागृत करूगां। 7. मैं जाति प्रथा को खत्म करूगां।

**नामः अंकित शर्मा, आयुः २६ वर्ष, योग्यताः बी.एस.सी., कार्यः प्राइवेट जॉब, पताः इनायत नगर, फैजाबाद।**

## संध्या काल

**भाद्रपद- मास, शरद ऋतु, कलि-5120, वि. 2076**
**( 16 अगस्त 2019 से 14 सितम्बर 2019 )**
**प्रातः कालः 6 बजकर 00 मिनट से (6.00 A.M.)**
**सांय कालः 6 बजकर 45 मिनट से (6.45 P.M.)**

**आश्विन- मास, शरद ऋतु, कलि-5120, वि. 2076**
**( 15 सितम्बर 2019 से 13 अक्टूबर 2019 )**
**प्रातः कालः 6 बजकर 15 मिनट से (6.15 A.M.)**
**सांय कालः 6 बजकर 30 मिनट से (6.30 P.M.)**

# आर्य निर्माणशाला में विभिन्न स्थानों पर निर्मात्री सभा के आचार्यों द्वारा आर्य व आर्या निर्माण

स्वामी व प्रकाशक आचार्य हनुमत्प्रसाद द्वारा सांगोपांगवेद विद्यापीठ, आर्ष गुरुकुल, टटेसर-जौन्ती, दिल्ली-81 से प्रकाशित

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् - समाचार पत्र मे छपे लेखों तथा विचारों से सम्पादक का पूर्णतया सहमत होना आवश्यक नहीं है। क्योंकि अनवधानतावश त्रुटि एवं मतभिन्न होना सम्भव है। सभी न्यायिक विवाद दिल्ली में निपटाये जाएंगे।